उपसंहार

उपसंहार

गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी साहित्य-गगन के जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं। वे महान् भक्त, विचारक एवं अलौकिक काव्य-शक्ति-सम्पन्न कवि हैं। उन्होंने अपने काव्य-कौशल से मध्ययुगीन भारत की सम्पूर्ण चेतना को काव्यमयी वाणी दी है। उनकी अलौकिक तूलिका से निर्मित राम-काव्य अपनी उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया है। उनकी प्रत्येक रचना राम-कथा का संस्पर्श करती है।

मेरे लघु शोध-प्रबन्ध का विषय है '' 'रामचरितमानस' में मानवेतर प्राणी-सृष्टि का चित्रण'' प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबन्ध लिखने के पूर्व मेरे मन में जो प्रश्न अंकुरित हुये थे उनका समाधान उपसंहार में देने का मैंने प्रयास किया है।

इस लघु शोध-प्रबन्ध के 'प्रथम अध्याय' में मैंने तुलसीदास के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दिया है। इसमें मैंने अन्य अनेक उपलब्ध समीक्षा-ग्रन्थों के आधार पर उनकी प्रामाणिक जीवनी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। तुलसीदास ने समाज के नाना स्तरों का जीवन भोगा था। वे गृहस्थ-जीवन की निकृष्टतम कोटि की आसक्ति के शिकार रह चुके थे। उन्होंने सामान्य जनता के दुःखों, कष्टों एवं समस्याओं को निकट से देखा था और उनका स्वयं अनुभव किया था। युगीन परिस्थितियों से उनकी चेतना जागृत हुई, जिनका प्रतिफलन उनकी रचनाओं में द्रष्टव्य है।

गोस्वामीजी ने 'रामचरितमानस' जैसे अद्वितीय काव्य-ग्रन्थ की रचना की, जो भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य एवं भक्ति का अमर काव्य है। यह गोस्वामीजी के निष्णात पांडित्य, व्यापक अनुभव, गहन एवं सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि तथा समर्थ अभिव्यंजना-शक्ति का परिचायक है। यह ज्ञान का विपुल भण्डार एवं सामाजिक सुविचारों का आगार है। इसमें तत्कालीन समाज समाहित है।

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबन्ध का 'द्वितीय अध्याय' है ''प्रकृति और मानव''

मानव का जन्म एवं विकास प्रकृति की गोद में ही हुआ है। प्रकृति सब का मातृवत् पालन-पोषण करती हे। भारतीय संस्कृति एक अरण्य-संस्कृति है, जहाँ पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों एवं वन्य जीवों को पूजा जाता है। यहाँ सघन वृक्षों की शीतल छाया में ही ऋषि-मुनियों ने ज्ञानार्जन कर मानव जाति के विकास में योग दिया है।

प्रकृति-सौन्दर्य मनुष्य में कोमल, शान्त एवं मौलिक विचारों का सृजन करता है। इससे मानव की सुसुप्त कलात्मक भावनायें जाग उठती हैं। मनुष्य की रचनात्मक शक्ति की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति के लिये प्रकृति प्रेरणा का स्रोत है। प्रकृति की रंग-बिरंगी फुलवारी, पशु-पक्षी, कीट-पतंगों आदि की अदभुत् सृष्टि को देख कर ऋषियों

ने इस कुशल रचना के अनुपम स्रष्टा की खोज की। उनके अनुसार परमात्मा ने ही प्रकृति के रूप में नाना रूप धारण किये हैं।

हमारे प्राचीन ग्रन्थ प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण से ओत-प्रोत हैं। गीता में श्रीकृष्ण ने अपनी विशिष्ट विभूतियों का वर्णन करते हुये सुमेरु, हिमालय एवं पीपल को अपना ही स्वरूप बताया है। श्रीकृष्ण ने गोवर्धन-पूजा के रूप में प्रकृति-पूजा की प्रेरणा दी है।

गोस्वामीजी प्रकृति-सौन्दर्य के प्रेमी थे। उन्होंने प्राकृतिक उपमाओं द्वारा मानव-चरित्र के विकास का प्रयत्न किया है। उन्होंने प्रकृति एवं मनुष्य का सम्बन्ध अटूट माना है। उन्होंने सम्पूर्ण चर-अचर, जड़-चेतन विश्व को राममय माना है।

योरोपीय विद्वानों के अनुसार प्रकृति और मानव का अनवरत संघर्ष चलता रहता है। माँटिग्यू नामक विचारक के अनुसार मानव सम्पूर्ण सृष्टि को अपने अधिकार में रख सकता है। इस वस्तुनिष्ठ साहित्य (Pink Literature) के प्रभाव के कारण प्रकृति का दोहन होने लगा और इकॉनॉमी (Economy = अर्थ - लाभ) के कारण इकॉलॉजी (Ecology = पर्यावरण) का सन्तुलन बिगड़ने लगा। अतः पर्यावरण-सन्तुलन के लिये अरण्य-संस्कृति के पुरातन मूल्यों की पुनर्स्थापना करनी होगी।

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबन्ध का 'तृतीय अध्याय' है " 'रामचरितमानस' में वर्णित प्राणि-सृष्टि का प्रसंगानुसार निर्देश"

भारतीय संस्कृति में 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुये पशु, पक्षी, वन्य-जीव, वनस्पति एवं सम्पूर्ण चराचर सृष्टि के प्रति आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित किया गया है। यहाँ मानवेतर प्राणि-सृष्टि के चित्रण की एक सुदीर्घ परम्परा रही हैं। 'वाल्मीकीय रामायण', 'पंचतन्त्र', पौराणिक एवं जातक कथाओं, 'मेघदूत', 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्', 'नल-दमयंती', 'पद्मावत' आदि ग्रन्थों में मानवेतर प्राणियों से सम्बन्धित कथायें हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने इसी परम्परा का अवलम्ब करते हुये 'रामचारितमानस' में मानवेतर प्राणि-सृष्टि का चित्रण किया है।

'बालकाण्ड' में रावण, कुंभकर्ण एवं विभीषण के जन्म की कथा का वर्णन करते हुये बताया गया है कि तपस्या से शक्ति प्राप्त होती है; लेकिन जब उसका दुरुपयोग प्रजा-उत्पीड़न में होता है, तो उसके दमन के लिये दैविक शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। रावण तुलसी के समकालीन अन्यायी बादशाहों का प्रतीक है, जो प्रजा पर असीम अत्याचार करते थे। गोस्वामीजी ने बादशाहों द्वारा उत्पीड़ित तत्कालीन समाज को सान्त्वना दी कि दैविक शक्ति उनके दुःखों का विमोचन करेगी।

'अयोध्याकाण्ड' में गोस्वामीजी ने मानवेतर प्राणियों में जड़, चेतन, चर, अचर सब को समाहित करके प्रकृति के विभिन्न उपादनों में मानवता के दर्शन किये हैं। उन्होंने प्रकृति को गोचर की सीमा में न बाँध कर उससे आत्मीयता स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। उन्होंने प्रकृति की मानव के सुख में सुखी एवं दुःख में दुःखी होने की भावानुकूल भाषा को समझा है। इसीलिये राम-वनगमन के अवसर पर वृक्ष और बेलें कुम्हलाने लगती हैं, नदी और तालाब भयानक लगने लगते हैं और पशु-पक्षी व्याकुल हो जाते हैं। गंगा के निर्मल जल से आशीर्वादात्मक वाणी प्रस्फुटित होती है और आकाश तथा प्रयागराज में धन्य, धन्य की ध्वनि सुनाई देती है।

'अरण्यकाण्ड' में जयन्त की कथा के रूप में प्रभुता-सम्पन्न पिता की दुष्ट सन्तान की दुर्गति की ओर संकेत किया गया है। राम के द्रोही को कोई शरण नहीं देता, अन्त में उसे अशरण-शरण राम की ही शरण लेनी पड़ती है। शूर्पणखा विलासिता का प्रतीक है। सर्वनाशिनी विलासिता जन-जीवन में भव्य रूप धारण करके प्रवेश करती है, लेकिन चारित्रिक दृढ़ता से उसका दमन किया जा सकता है यह भी तुलसीदास ने स्पष्ट किया है। ऋषि-मुनियों का भक्षण करने वाले एवं यज्ञों का विध्वंस करने वाले व्यक्ति ही राक्षस हैं। गृध्रराज जटायु परमार्थ का प्रतीक है, जो दूसरों की भलाई के लिये अपना प्राणोत्सर्ग करता है। गोस्वामीजी ने इसे 'परम बड़भागी' कह कर सम्बोधित किया है।

'किष्किन्धाकाण्ड' में राम-हनुमान मिलन के प्रसंग में दास्य-भाव की भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। बालि-वध के प्रसंग में सामाजिक सुव्यवस्था के लिये सच्चरित्रता को आवश्यक बताया गया है। सुग्रीव के राम-कार्य के विस्मरण द्वारा यह बताया गया है कि भोगों में लिप्त व्यक्ति कर्तव्य-च्युत हो जाता है। सम्पाति-प्रसंग में राम-कृपा के चमत्कार की ओर संकेत है। सम्पाति राम-कृपा से सुन्दर शरीर प्राप्त कर लेता है।

'सुन्दरकाण्ड' में लंकिनी के प्रसंग में सत्संग की महिमा का वर्णन किया गया है। गोस्वामीजी ने सेवा के कारण हनुमान को देवत्व प्रदान किया है। हनुमान सीतान्वेषण के लिये जिस-जिस महल में प्रवेश करते हैं, उसे 'मन्दिर' नाम से सम्बोधित किया गया है। विभीषण के रूप में एक सच्चे वैष्णव का परिचय दिया गया है, जिनके महल में भगवान् का मन्दिर है। वहाँ रामायुध अंकित है एवं तुलसी के वृक्ष-समूह लगे हुये हैं। वे जगते ही राम-नाम का उच्चारण करते हैं। समुद्र को 'जड़' शब्द से सम्बोधित किया गया है। वह नारी-समाज के प्रति अनुदार शब्दों का प्रयोग करके अपनी जड़ता सिद्ध कर देता है।

'लंकाकाण्ड' में सेतुबन्ध के प्रसंग में राम-कृपा की महिमा का वर्णन किया गया है, जिससे पत्थर भी पानी पर तैर जाते हैं। कोई भी व्यक्ति मात्र उत्तम कुल में जन्म लेने से महान् नहीं होता। रावण का जन्म उत्तम कुल में हुआ था; लेकिन वह अपने दुष्कृत्यों के कारण खलनायक है। वह नारी समाज को भोग्या समझता है। वह नारी-समाज के प्रति असहिष्णुता प्रकट करता है। राम का विरोध करने वाले की दुर्गति होती है। विश्व-विजेता रावण के कुल में अंतिम समय रोने वाला भी नहीं बचा।

'उत्तरकाण्ड' में गरुड़ के मोह-प्रसंग में सत्संग की महिमा का वर्णन किया गया है। अयोध्या में वानरों की विदाई के प्रसंग में दास्य-भाव की भक्ति का एवं काकभुशुण्डि के प्रसंग में अविरल एवं निष्काम भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। लोमश एवं काकभुशुण्डि के प्रसंग में सगुण और निर्गुण का समन्वय करते हुये सगुण-भक्ति की श्रेष्ठता बताई गई है। यहाँ ज्ञान एवं भक्ति तथा शैवों एवं वैष्णवों का भी समन्वय किया गया है। काकभुशुण्डि अनेक योनियों में जन्म लेता है। इस प्रसंग के द्वारा पुनर्जन्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। हरि के वाहन पक्षीराज गरुड़ काकभुशुण्डि के सानिध्य में बैठ कर ज्ञानार्जन करते हैं एवं अपने अभिमान से मुक्ति पाते हैं। श्रेष्ठता का आधार छोटा या बड़ा होना नहीं; बल्कि ज्ञान ही है।

'चतुर्थ अध्याय' में मानवेतर प्राणियों का चित्रण किया गया है। गोस्वामीजी ने सम्पूर्ण विश्व को भगवदीय शक्ति से परिव्याप्त माना है। इसीलिये उन्होंने जड़, चेतन, चर, अचर सभी प्राणियों को राममय मान कर उनकी वन्दना की है। उन्होंने मानव से मानवेतर प्राणियों का सम्बन्ध अटूट माना है। इसलिये उन्होंने 'रामचरितमानस' में मनुष्यों के साथ-साथ राक्षस, वानर, भालू, पशु, पक्षी, नाग, प्रेत, पितर, गन्धर्व, किन्नर एवं समुद्र जैसे मानवेतर प्राणियों को भी समाविष्ट किया है।

1. राक्षस

समाज में व्याप्त आसुरी शक्तियाँ जब समाज के लिये अभिशाप एवं पृथ्वी के लिये भार-स्वरूप हो जाती हैं; तब दैविक-शक्ति अवतरित होकर उन राक्षसी शक्तियों का पराभव करती है। गोस्वामीजी ने पर-धन एवं पर-दारा का अपहरण करने वाले, दुराचारी, अत्याचारी, हिंसक, क्रूर, निर्दयी, कुटिल, लम्पट, स्वार्थी, अभिमानी, द्वेषी एवं दूसरों के हित की हानि करने वाले व्यक्तियों को राक्षस की संज्ञा दी है। गोस्वामीजी ने रावण के जीवन के चित्रण द्वारा यह बताया है कि दुराचारी की दुर्गति एवं अभिमानी का घोर पतन निश्चित है। तान्त्रिक-साधना एवं वाममार्गीय क्रियायें व्यर्थ हैं। कुल की उच्चता का अहंकार निरर्थक है। असत्य चाहे कितना ही बलाढ्य लगे, अन्तिम विजय

सत्य की ही होती है। राम की विश्वात्मवादी, सर्वमंगलकारी विचार-धारा से रावण की निरंकुश, व्यक्तिवादी विचार-धारा पराजित हो जाती है।

रावण तुलसीदास के समकालीन अन्यायी बादशाहों का प्रतीक है, जो सत्ता के मद में चूर होकर प्रजा का उत्पीड़न करते थे। गोस्वामीजी ने 'कवितावली' में रावण का वर्णन करते हुये सालिम (दृढ़), फहम (समझ), रहम (दया), खलक (संसार), हलक (कंठ) जैसे फारसी शब्दों का प्रयोग किया है। गोस्वामीजी ने रावण की राक्षसी शक्ति का पराभव बता कर प्रजा का सान्त्वन किया है कि दैविक-शक्ति उनके दुःखों का विमोचन करेगी। वानर-भालुओं के प्रसंग द्वारा उन्होंने सामान्य जन को संगठित होने एवं बादशाहों की दानवी शक्ति का प्रतिकार करने की प्रेरणा दी है।

गोस्वामीजी ने कुंभकर्ण के प्रसंग द्वारा तामसी आहार से तमोगुण का प्राबल्य बताया है। माँस-भक्षण एवं सुरादि प्राशन के दुष्प्रभाव से व्यक्ति विवेक-शून्य हो जाता है और वह भले-बुरे का निर्णय नहीं कर सकता। कुंभकर्ण जगते ही रावण को राम की शरण में जाने का सत्परामर्श देता है; लेकिन माँस-मद्य का सेवन करते ही वह राम से युद्ध करने के लिये चल पड़ता है। यह तामसी आहार का ही दुष्परिणाम है।

विभीषण का जीवन परम वेष्णव के जीवन का प्रतीक है। उनके भवन में भगवान का मन्दिर हे एवं महल पर रामायुध (धनुष-बाण) का चिह्न अंकित है। चारों ओर तुलसी के वृक्ष-समूह लगे हुये हैं। वे जग कर उठते ही राम-नाम का स्मरण (उच्चारण) करते हैं। ये सभी परम वेष्णव के लक्षण हैं। उनके जीवन के द्वारा सन्त-समागम का महत्त्व स्थापित किया गया है। मोक्ष का सुलभ साधन प्रपत्ति (शरण) है, जिसके द्वारा भगवान् का सामीप्य प्राप्त किया जा सकता है।

मेघनाद के जीवन के द्वारा वाममार्गीय हिंसा, पशु-बलि आदि क्रियाओं की व्यर्थता प्रकट की गई हे। मेघनाद तान्त्रिक है। वह विजय-प्राप्ति के लिये अपवित्र यज्ञ करके उसमें पशु-बलि देता है; लेकिन इन वाममार्गीय क्रियाओं का प्रश्रय लेने के बाद भी उसका पराभव हो जाता है।

शूर्पणखा कामातुरता एवं विलासिता का प्रतीक है। विलासिता जन-जीवन में भव्य रूप लेकर प्रवेश करती है लेकिन चारित्रिक दृढ़ता से उसका दमन किया जा सकता है। गोस्वामीजी ने अनियन्त्रित 'काम' के दुष्परिणाम की ओर संकेत किया है। इस प्रसंग के द्वारा एक पत्नीव्रत की प्रस्थापना की गई है।

मारीच के जीवन से समरांगण में वीरगति से मोक्ष-प्राप्ति की ओर संकेत है। लंकिनी के प्रसंग द्वारा सत्संग की महिमा का बखान किया गया है।

2. वानर-भालू

वानर-भालू दास्य-भाव की भक्ति के प्रतीक हैं। उन्होंने अपना सर्वस्व समर्पित करके भगवान् राम की सेवा की है। वानरों में हनुमान एक आदर्श कर्मयोगी भक्त हैं, जो अपनी वीरता, गतिमत्ता, निर्भयता, तत्परता, सामयिक चेतना, आज्ञा-पालन, सेवा-परायणता, आस्तिकता एवं विनयशीलता आदि गुणों के कारण उच्च आदर्श प्रस्तुत करते हैं। सेवा के कारण उन्हें देवत्व प्रदान किया गया है। सीतान्वेषण के समय वे जिस-जिस महल में प्रवेश करते हैं, उसे गोस्वामीजी ने 'मन्दिर' शब्द से अभिहित किया है।

अंगद भी दास्य-भक्ति के प्रतीक हैं। वे प्रभु राम को स्वामी, गुरु, माता, पिता सब कुछ मान कर एवं स्वयं को दीन सेवक मान कर उनकी शरण में रहना चाहते हैं। ये सभी एक आदर्श दास्य-भाव के भक्त के गुण हैं।

सुग्रीव के जीवन के द्वारा भोगों की लिप्तता के कारण कर्तव्य-च्युतता कि ओर संकेत है। सुग्रीव द्वारा तारा को पत्नी-रूप में ग्रहण करने के प्रसंग द्वारा विधवा-विवाह का समर्थन किया गया है।

सामाजिक सुव्यवस्था के लिये सच्चरित्रता आवश्यक है और अभिमानी का पतन होता है, यह बालि के जीवन के द्वारा बताया गया है। जामवन्त के जीवन के द्वारा सगुण-भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। राम-कृपा से पत्थर भी तैर जाते हैं, यह नल-नील के जीवन द्वारा प्रतिपादित किया गया हैं।

3. पक्षी

पक्षियों में राम-कार्य के लिये प्राणार्पण करने वाले जटायु जैसे महापुरुष हुये हैं। वे परोपकार के प्रतीक हैं। उन्होंने परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग किया है। गोस्वामीजी ने लक्ष्मण, अंगद, हनुमान आदि के लिये 'बड़भागी' एवं प्रभु राम की चरण-रज का स्पर्श प्राप्त करने वाली अहल्या के लिये 'अतिशय बड़भागी' शब्द का प्रयोग किया है। लेकिन परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग करने वाले जटायु के लिये उन्होंने 'परम बड़भागी' शब्द का प्रयोग किया है। इसके द्वारा गोस्वामीजी ने परमार्थ को ही सर्वोच्च धर्म प्रस्थापित किया है।

व्यक्ति जन्म से महान् नहीं होता, अपने कर्म से महान् होता है। ज्ञान-प्राप्ति के लिये जिज्ञासा-भाव आवश्यक है, हरि-कृपा से सन्त समागम होता है एवं श्रेष्ठता का आधार ज्ञान है, यह गरुड़ के जीवन के द्वारा प्रतिपादित किया गया है। काकभुशुण्डि के प्रसंग के द्वारा पुनर्जन्म के सिद्धान्त एवं दास्य-भक्ति का प्रतिपादन किया गया

है। ज्ञान से भक्ति को श्रेष्ठ बताया गया है, क्योंकि तुलसीकालीन परिस्थितियों में जन साधारण का मानसिक स्तर ज्ञान की उपादेयता समझने में असमर्थ था। गोस्वामीजी ने ज्ञान, कर्म एवं भक्ति का समन्वित रूप ग्राह्य माना है; लेकिन भक्ति को ही उन्होंने राजमार्ग माना है। शैवमत एवं विष्णुमत का समन्वय किया गया है। गुरु की अवज्ञा नहीं होनी चाहिये एवं मर्यादा का पालन किया जाना चाहिये। व्यक्ति का मूल्यांकन कर्म से होता है, जन्म से नहीं।

सम्पाति के प्रसंग में राम-कृपा की ओर संकेत है।भगवत्कृपा से उसके नये पँख उग आते हैं एवं उसका शरीर सुन्दर हो जाता है। जयन्त समर्थ पिता की कुटिल सन्तान का प्रतीक है।

4. अन्य मानवेतर प्राणी

समुद्र नारी-समाज के लिये अनुदार शब्दों का प्रयोग करके अपनी जड़ता सिद्ध करता है। जब प्रेम एवं अहिंसा का मार्ग असफल हो जाता है तब राजा या शासक को दण्ड का प्रयोग करना पड़ता है; क्योंकि दुष्ट लोगों का हृदय-परिवर्तन संभव नहीं है, यह समुद्र के प्रसंग से परिलक्षित होता है।

इनके अतिरिक्त गोस्वामीजी ने पशु, भ्रमर, वृक्ष, लताओं, जलचर प्राणियों, नदियों, तीर्थराज प्रयाग, पर्वत, पृथ्वी, देवता, नाग, किन्नर, दिग्पाल, पुष्पक विमान एवं चारों वेदों का मानवेतर प्राणियों के रूप में चित्रण किया है।

इस प्रकार गोस्वामीजी ने मानवेतर प्राणियों के मर्म को पहचान कर उनसे आत्मीयता का अटूट सम्बन्ध स्थापित किया है। उन्होंने 'रामचरितमानस' में नर, वानर, राक्षस, पशु, पक्षी, जड़-चेतन सब का स्नेह-सम्मेलन स्थापित करके 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को पुष्ट किया है। उन्होंने अपने महान् व्यक्तित्व के कारण अपनी भक्ति को विराट् स्वरूप प्रदान करके मानवेतर प्राणियों को भी परिवेष्टित कर लिया है। उन्होंने हमारा ध्यान विश्व में व्याप्त चेतना की ओर आकर्षित किया है। उनका मानवेतर प्राणियों का चित्रण सोद्देश्य है।

■ □ ■